# साम्प्रदायिकता की चुनौती

**-मनोज कुमार झा**

**प्रे**मचन्द ने कहा था कि साम्प्रदायिकता हमेशा संस्कृति की खाल ओढ कर आती है। आज यह बात सच होती दिखाई पड़ रही है। साम्प्रदायिक ताकतों ने हिंदू संस्कृति के नाम पर देश भर में अराजक माहौल बनाना शुरू कर दिया है। नरेन्द्र मोदी के सत्ता में आने के बाद साम्प्रदायिक ताकतों को सरकार का संरक्षण मिल रहा है और यही कारण है कि सरकार में शामिल कई मंत्री खुल कर आपत्तिजनक बयान दे रहे हैं। अभी साध्वी निरंजन ज्योति के 'रामजादे और हरामजादे' वाला विवाद शांत भी नहीं हुआ था कि विदेश मंत्री सुषमा स्वराज ने भगवद् गीता को राष्ट्रीय ग्रंथ घोषित करने की मांग कर डाली। अब इस पर विवाद शुरू हो गया है। भगवद्गीता की मान्यता एक हिंदू धर्मग्रंथ के रूप में है। इस दृष्टि से इसे राष्ट्रीय ग्रंथ घोषित करने का कोई तुक नहीं। वैसे भी किसी ग्रंथ को राष्ट्रीय ग्रंथ घोषित किया जाना कहीं से भी समझदारी की बात नहीं लगती। लेकिन भाजपा लगातार ऐसे मुद्दों की तलाश में रहती है कि किसी बहाने हिंदू वोटरों को अपनी तरफ़ खींचा जाए। उनके पास जन समस्याओं से जुड़े मुद्दे हैं नहीं, इसलिए ऐसे मुद्दे उछालना उनकी मज़बूरी ही है।

**भू**लना नहीं होगा कि भाजपा पहली बार जब सत्ता में आई थी, तो साम्प्रदायिक मुद्दे के आधार पर ही। आडवाणी की रामरथ यात्रा और बाबरी मस्जिद विध्वंस को कौन भूल सकता है भला। इस यात्रा के माध्यम से साम्प्रदायिक उन्माद भड़का कर भाजपा पहली बार केन्द्र की सत्ता में आ सकी। लेकिन तब भाजपा सरकार गठबंधन सरकार थी और इसलिए खुलकर साम्प्रदायिक एजेंडे को आगे बढा पाना उसके लिये मुमकिन नहीं था। लेकिन अब केन्द्र में भाजपा की पूर्ण बहुमत वाली सरकार है और प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी हैं, जो अपने उग्र तेवर के लिए पूरी दुनिया में प्रसिद्ध हो चुके हैं। गुजरात दंगों के दौरान इन्होंने जो नाम कमाया, उससे प्रभावित होकर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने इन्हें प्रधान सेवक, बना दिया। इन्होंने अपने मंत्रिमंडल में शामिल लोगों को स्वतंत्र निर्णय लेने से रोक दिया है और उनकी हैसियत कठपुतला-कठपुतली वाली कर दी है। इसके साथ ही, ये अब राज्यों में भाजपा की सत्ता कायम करने का प्रयास में लगे हुए हैं। विकास के नाम पर राजनीति करने का दिखावा करने वाले मोदी जब तक साम्प्रदायिक ध्रुवीकरण नहीं करते, चुनावों में सफलता नहीं मिल सकती। इस काम में भाजपा के दंगारोपी और तड़ीपार रह चुके अध्यक्ष अमित शाह लगे हैं और उन्हें सफलता भी मिल रही है। इसके अलावा, अपने मंत्रिमंडल में मोदी ने गिरिराज सिंह जैसे गुंडों और बलात्कारियों तक को शामिल कर रखा है। अब येन-केन प्रकारेण राज्यों की सत्ता हासिल करना इनका लक्ष्य है। इसके लिये ये किसी हद तक जा सकते हैं। चुनाव के पहले दंगा भड़काना, दंगाइयों को सम्मानित करना आदि ऐसे काम हैं, जो दिखाते हैं कि मोदी सरकार किस तरह साम्प्रदायिक ध्रुवीकरण की नीति पर पुरजोर तरीके से चल रही है और चलती रहेगी, क्योंकि इसका विकल्प नहीं है और विरोधी दलों को समझ में नहीं आ रहा है कि वे करें तो क्या।

**दू**सरी तरफ़ मोदी सरकार शिक्षा के क्षेत्र में ऐसे बदलाव करने जा रही है, ताकि नई पीढ़ी को कूपमंडूक बनाया जा सके और वैज्ञानिक तर्कबुद्धि आधारित चेतना कुंद की जा सके। इसके लिये सुनियोजित प्रयास किए जा रहे हैं और इसका कहीं कोई विरोध नज़र नहीं आ रहा। साम्प्रदायिक ताकतें सबसे पहले इतिहास पर ही हमला करती हैं। वो इतिहास के तथ्यों को तोड़-मरोड़ कर पेश करती हैं, ताकि जनता को बरगलाया जा सके। रामजन्मभूमि का विवादित मुद्दा और बाबरी मस्जिद का विध्वंस इनके इतिहास को विकृत करने के प्रयास का ही नतीजा था। दरअसल, राष्ट्रीयस्वयं सेवक संघ शुरू से ही साम्प्रदायिक एजेंडे को देशभर में फैली अपनी शाखाओं के माध्यम से प्रचारित करता रहा, पर नेहरू और उनके बाद इंदिरा गांधी के शासन के दौर में उसे कोई खास सफलता नहीं मिली। इसकी वजह थी कि इन्होंने शिक्षा के क्षेत्र में वैज्ञानिक विचारों का जहां तक संभव हो सका, समावेश किया। दूसरे, उस दौरान समाजवादी और कम्युनिस्ट भी ताकतवर थे। इस वजह से संघ दुबका रहा। लेकिन फ़िर भी वह तरह-तरह के संगठनों और देश भर में फ़ैले सरस्वती शिशु शिक्षा मंदिरों के माध्यम से साम्प्रदायिकता के प्रसार की नीति पर चलता रहा और हिंदू राष्ट्र का झंडा बुलंद करता रहा। इमरजेंसी के दौरान इंदिरागांधी ने तमाम संघियों को जेल में ठूंस दिया। इसके बाद जब जनता दल का गठन हुआ तो जनसंघ उसमें शामिल हो गया। यह जनता पार्टी में शामिल दलों की ढुलमुल नीतियों की वजह से हुआ, बावजूद संघ को सफलता नहीं मिली। राजनीति में जगह बनाने में वह कामयाब नहीं हो सका। इंदिरागांधी की हत्या के बाद सहानुभूति लहर पर सवार होकर राजीव गांधी सत्ता में आए, पर साम्प्रदायिक सवाल पर उनकी नीतियां भी ढुलमुल थीं। बहुचर्चित शाहबानो प्रकरण उन्हीं के समय में आया था, जिसे अल्पसंख्यक तुष्टिकरण के रूप में देखा गया। साथ ही, विवादित रामजन्मभूमि का ताला भी उनके समय में ही खोला गया, जिसने संघ परिवार को इस मुद्दे पर राजनीति करने का अच्छा-खासा मौका दे दिया। खास बात ये है कि राजीव गांधी ने भी इंदिरा गांधी के बाद सिखों के ख़िलाफ़ भड़के दंगों पर कोई कठोर रूप नहीं अपनाया था और एक तरह से कांग्रेसी दंगाइयों का बचाव ही किया था। सिखों के खून से बड़े कांग्रेसी नेताओं के हाथ रंगे हुए थे। ऐसे में, उनसे यह उम्मीद नहीं की जा सकती थी कि वह साम्प्रदायिकता के प्रश्न पर कोई संतुलित नीति अपनाएंगे। राजीव की सरकार जल्द ही भ्रष्टाचार-घोटालों में डूब गई। उनके बाद वीपी सिंह के नेतृत्व में जो अल्पमत सरकार बनी, उसे वामपंथियों के साथ भाजपा ने भी समर्थन दिया। सिर्फ़ कांग्रेस विरोध के नाम पर ऐसा करना उचित नहीं था, क्योंकि इसमें भाजपा की ताकत बढ़ी और इसके बाद ही उसने रामजन्मभूमि का मुद्दा जोर-शोर से उठाना शुरू कर दिया। रामरथ यात्रा शुरू की। परिणाम दंगे और आगे चल कर भाजपा की सरकार।

**दे**खा जाए तो शुरू से ही कांग्रेस के पास साम्प्रदायिकता विरोध की कोई ठोस नीति नहीं थी। साम्प्रदायिकता और धर्मनिरपेक्षता की उनकी समझ भी स्पष्ट नहीं थी। अगर ऐसा होता, कांग्रेस नेतृत्व वास्तव में धर्मनिरपेक्ष और साम्प्रदायिकता विरोधी होता तो क्या देश का विभाजन हो पाता? उल्लेखनीय है कि 1857 के गदर के बाद से ही अंग्रेजों में सुनियोजित तौर पर साम्प्रदायिक नीति की शुरूआत कर दी थी, आगे चल कर जिसके जाल में कांग्रेस लगातार उलझती चली गई। धार्मिक आधार पर 1905 में ही लार्ड कर्जन ने बंगाल का विभाजन किया था। साम्प्रदायिक आधार पर किए गए इस विभाजन का भारी विरोध हुआ और बंगभंग के विरोध में आंदोलन चला। इसके परिणामस्वरूप दो साल बाद 1907 में अंग्रेजों को यह विभाजन वापस लेना पड़ा। लेकिन इसके बाद भी अंग्रेजों ने साम्प्रदायिक राजनीति जारी रखी, जिसका विरोध कांग्रेसी नेतृत्व नहीं कर सका। साम्प्रदायिकता के समक्ष सबसे निर्लज्ज समर्पण कांग्रेस और वामपंथियों ने तब किया, जब उन्होंने माउंटबेटन प्लान को स्वीकार कर देश के विभाजन को स्वीकार कर लिया। जाहिर है, कांग्रेस को जल्दी से जल्दी सत्ता पाने की लालसा थी। वामपंथियों का वैचारिक दिवालियापन तो इससे जाहिर होता है कि उन्होंने पाकिस्तान बनने की वकालत की थी। धर्म को राष्ट्रवाद से जोड़ दिया था। आखिर, इनसे ये कैसे उम्मीद की जा सकती थी कि ये भारतीय राजनीति से साम्प्रदायिक तत्वों को दूर रखने में सफल हो सकेंगे? हुआ यह कि बहुसंख्यक यानी हिंदू साम्प्रदायिकता का विरोध करते हुए इन्होंने अल्पसंख्यक साम्प्रदायिकता को बढावा देना शुरू कर दिया और अल्पसंख्यकों का सुरक्षित वोट बैंक के रूप में इन्होंने इस्तेमाल किया। इसकी प्रतिक्रिया में हिंदू संप्रदायवाद और भी मजबूत होता रहा।

**अ**ब राष्ट्रीय राजनीति के पटल से कांग्रेस और अन्य क्षेत्रीय दलों के सफ़ाये के बाद साम्प्रदायिक चुनौती बहुत ही प्रबल हो चुकी है। नरेन्द्र मोदी ने एक राजनीतिक दल के तौर पर भाजपा का लगभग खात्मा ही कर दिया है, क्योंकि पार्टी में मोदी और अमित शाह के अलावा अन्य किसी नेता का कोई वजूद ही नहीं है। मोदी एकाधिकारवादी हैं। वह 'मैं' की बात करते हैं, 'हम' की नहीं। मंत्रिमंडल में छाट-छांट कर ऐसे लोगों को रखा है, जो कोई आवाज़ न उठा सकें। भाजपा के बड़े कद-काठी के नेता दरकिनार कर दिए गए। उन्हें 'मार्गदर्शक मंडल' में बिठाकर मौन रहने के लिए मजबूर कर दिया गया है।बहरहाल, चिंता का विषय यह है कि मोदी सरकार शिक्षा में पाठ्यक्रम में जो बदलाव करने जा रही है, वह पूरी की पूरी पीढी को मानसिक रूप से पंगु बना सकती है। स्कूली शिक्षा के क्षेत्र में गुजरात में पहले से ही संघ के इतिहासकार दीनानाथ बत्रा की अवैज्ञानिक किताबें पढाई जा रही हैं। उन्हीं किताबों को सभी राज्यों में थोपने की योजना है। **दीनानाथ बत्रा जैसे इतिहासकारों की संघ में कमी नहीं है। इनका मानना है कि ताजमहल पहले हिंदू मंदिर था। ये मिसाइल टेक्नोलॉजी महाभारत से उत्पन्न मानते हैं। स्वयं प्रधानमंत्री की समझ कितनी वैज्ञानिक है, यह इससे ज़ाहिर हो गई कि उन्होंने सार्वजनिक तौर पर कहा कि पुराणों में स्टेम सेल टेक्नोलॉजी थी। गणेश जी को सूंड लगाया जाना प्लास्टिक सर्जरी को दिखाता है। यह सब अत्यंत ही हास्यास्पद है, पर आश्चर्य की बात तो ये है कि इसका कहीं कोई विरोध दिखाई नहीं पड़ता। किसी भी वैज्ञानिक ने, किसी भी इतिहासकार ने सार्वजनिक तौर पर प्रधानमंत्री की इन अवैज्ञानिक बातों का विरोध नहीं किया। वहीं, इतिहास और समाज विज्ञान की राष्ट्रीय शोध संस्थाओं में चुन-चुन कर ऐसे लोग बैठाए जा रहे हैं, जो संघ की साम्प्रदायिक विचारधारा में यकीन रखते हैं। और अंधविश्वासी हैं। भारतीय इतिहास अनुसंधान परिषद का अध्यक्ष वाई. सुदर्शन राव को बना दिया गया है, जिनकी शोध के क्षेत्र में कोई खास उपलब्धि नहीं है और जो वर्णाश्रम व्यवस्था को उचित ठहराते हैं ऐसे तथाकथित विद्वान किस तरह का शोधकार्य कराएंगे, ये आसानी से समझा जा सकता है। ऐसे ही कूपमंडूकों को चुन-चुन कर लाया जा रहा है। ये जनता के धन पर ये पता लगायेंगे कि राम और कृष्ण का जन्म कब हुआ था, जबकि माना जाता है कि वो अवतारी पुरुष थे, वास्तविक नहीं। वो कथा के काल्पनिक पात्र हैं, पर इतिहास अनुसंधान परिषद् यह शोध कर पता लगवाएगा। रामसेतु की ऐतिहासिकता पर तो विवाद पहले से ही चल रहा है, अब पुष्पक विमान और शेषनाग की ऐतिहासिक सच्चाई का पता लगाया जाएगा।** सवाल है, इन अवैज्ञानिक धारणाओं का विरोध विश्वविद्यालय में बैठे वो मार्क्सवादी प्रोफ़ेसर ओर बुद्धिजीवी क्यों नहीं कर रहे, जिन्होंने इतिहास और समाज विज्ञान के क्षेत्र में व्यापक शोध किए हैं। क्या उन्हें भी वर्तमान सत्ता से भय है? दूसरी तरफ़, कतिपय टीवी चैनल तो राम के जीवन की विविध तिथियों की घोषणा भी करने लगे।

**सि**र्फ़ इतना ही नहीं, राजनीतिक प्रचार के दौरान अब भाजपा और संघ परिवार के लोग खुलेआम ज़हर उगलते हुए साम्प्रदायिक प्रचार कर रहे हैं। इस मामले में सबसे आगे हैं भाजपा अध्यक्ष अमित शाह। पश्चिम बंगाल में उन्होंने ग़लत आरोप लगाते हुए यहां तक कह दिया कि वर्धमान विस्फ़ोटों के पीछे अवैध रूप से रह रहे बांग्लादेशी लोगों का हाथ है और तृणमूल ने इसकी फ़ंडिंग की है। इसका विरोध केंद्रीय मंत्री ने किया। जहां भी चुनाव होने होते हैं,भाजपा साम्प्रदायिक ध्रुवीकरण की नीति पर चल पड़ती है। अब तक इसी नीति से इन्हें फ़ायदा मिला है। इसलिये ये समझ चुके हैं कि ये नीति कारगर है। यही नहीं, जब लव जिहाद का मुद्दा इनका फेल हो गया तो अब इन्होंने निम्न तबके के मुसलमानों को लालच देकर धर्मपरिवर्तन कराना भी शुरू कर दिया है। अभी हाल में ही आगरा में ऐसी घटना सामने आई, जिसमें कई परिवारों का धर्मपरिवर्तन आरएसएस और बजरंग दल ने करवाया। संघ की नीति पूरी तरह से साम्प्रदायिकता को उभारने की है, क्योंकि उसे पता है कि इसी के सहारे सत्ता में आए और इसी के सहारे सत्ता में बने भी रहेंगे। सवाल है, साम्प्रदायिकता की चुनौती का जवाब क्या है?

# काला धन और मोदी सरकार: कहां गये वायदे ?

**क**हा जाता है कि झूठ की कलई एक दिन जरूर खुलती है। आज यही मोदी सरकार के साथ हो रहा है। लोकसभा चुनाव में कांग्रेस के भ्रष्टाचार पर लम्बे भाषण देने वाले नरेन्द्र मोदी ने बार-बार मंचों से यह दोहराया था कि वे सत्ता में आ गये तो विदेशों में जमा सारा काला धन देश में ले आयेंगे। सारे काले धन के मालिकों के नाम उज़ागर कर देंगे। समस्त भ्रष्टाचार का नाश कर देंगें। पर सत्ता में आये अभी 5 माह भी पूरे नहीं हुए थे कि मोदी सरकार काले धन के वायदे से पलटती नज़र आने लगी है। वित्त मंत्री अरुण जेटली अब मजबूरियां गिनाने लग गये हैं कि विदेशों से हुए समझौतों की बाध्यता के चलते वे स्विस बैंक के खाता-धारकों के नाम उजागर नहीं कर सकते। बाद में काफ़ी हो-हल्ले के बाद दो-तीन नाम जाहिर भी किये गये तो मोदी की पार्टी के राम जेठमलानी ने टिप्पणी की 'खोदा पहाड़ निकली चुहिया'।

काला धन व भ्रष्टाचार ही वह मुद्दा था जिस पर कांग्रेस सरकार को पहले अन्ना हजारे और रामदेव ने घेरा। भारतीय मध्यम वर्ग के बीच कांग्रेस सरकार को बदनाम कराया गया और फ़िर मंच पर अवतरित हुए मोदी ने वायदों की फुलझड़ियों से मध्यम वर्ग को मोह लिया। अरविन्द केजरीवाल दिल्ली में ही कदमताल करते रहे और मोदी देश के प्रधानमंत्री बन गये। देश के अधिकांश पूंजीवादी घरानों ने मोदी को जिताने में पूरी ताकत झोंक दी। सत्ता में आने के बाद भी झूठ को आकर्षक बना कर पेश करने में पूंजीवादी मीडिया मोदी की ताल से ताल मिलाये हुए है। 'मेक इन इंडिया' से लेकर 'श्रमेव जयते' तक एक-एक कर जनविरोधी बातें और स्कीमें वाक्चतुर मोदी व उनका भक्त बना पूंजीवादी मीडिया इस रूप में पेश करता रहा कि मानो इतना देशभक्ति भरा कदम किसी ने उठाया ही न हो। वास्तविकता यही है कि न तो 'मेक इन इंडिया', न 'सफाई अभियान' और न 'श्रमेव जयते' में मनमोहन सरकार से कुछ अलग, कुछ नया है। बदले नामों से पिछली सरकार भी यही सब कर रही थी। हां! फ़र्क है तो बस सिर्फ इतना ही कि तब मनमोहन सिंह अपनी जनविरोधी योजनाओं को देशभक्ति के लबादे में लपेट कर न तो पेश कर पाते थे और न ही पूंजीवादी मीडिया उनका इस तरह से भक्त बना था।

तो अब अरुण जेटली ने यह सच्चाई सामने ला दी कि विदेशों में जमा काला धन देश में नहीं ला सकते, वे मजबूर हैं। याद करें यही तर्क तो पिछले वित्त मंत्री चिदम्बरम दिया करते थे। क्या वास्तव में मोदी मनमोहन दोनों मजबूर हैं या इनकी मंशा ही काले धन को लाने की नहीं है। देश की शीर्ष सरकार भला मजबूर कैसे हो सकती हैं? वह विदेशों से संधि तोड़ सकती है। काले धन वाले लोगों को जेल में डाल सकती है। तो वास्तव में बात यहां मजबूरी की नहीं इच्छा की अधिक है। न तो मनमोहन सरकार और न ही मोदी सरकार, इनमें से किसी की इच्छा काले धन वाले लोगों पर कार्यवाही करना नहीं है।

जब अन्ना हजारे ने दो वर्ष पूर्व भ्रष्टाचार के ख़िलाफ़ आन्दोलन छेड़ा तो अन्ना हजारे के मुख्य निशाने पर सरकारी कर्मचारी, बाबू-चपरासी का भ्रष्टाचार था। इस आन्दोलन में देश का पढ़ा-लिखा मध्यम वर्ग भी खिंच आया था। जनलोकपाल भी सरकारी कर्मचारी और नेताओं को ही एजेण्डे पर लेता था। चूंकि इस सबमें पूंजीपति वर्ग-कारपोरेट घराने कहीं नहीं थे इसीलिए पूंजीवादी मीडिया ने इस आन्दोलन को हाथों-हाथ लिया। यहां तक कि कई पूंजीवादी कारपोरेट घराने सीधे आन्दोलन के समर्थन में पैसा तक देने लगे। इस सबसे परिणाम क्या निकला? न तो भ्रष्टाचार में कोई कमी आयी और न ही भ्रष्टाचार को इन तौर-तरीकों से रोका ही जा सकता था। हां! इस पूरे आंदोलन से कांग्रेस सरकार जरूर भ्रष्ट सरकार के बतौर स्थापित हो गयी। जिसका फ़ायदा पहले केजरीवाल तो बाद में मोदी ने ले लिया।

इस बीच में रामदेव व एकाध अन्य लोग विदेशों में जमा काले धन का मुद्दा लेकर आ गये। पूंजीपति वर्ग इस मुद्दे के छिड़ने से थोड़ा असहज हुआ पर वह घबराया नहीं। उसे अपने सिपहसालारों भाजपा-कांग्रेस दोनों पर पूरा भरोसा था। पूंजीवादी मीडिया भी निरंतर काले धन के अज्ञात मालिक पर बमबारी करता रहा और मोदी की ताल में ताल मिला देश की जनता को स्वप्न दिखाता रहा कि मोदी आयेंगे और काला धन लायेंगे। पूंजीवादी मीडिया और पूंजीपति वर्ग के साथ मोदी ये सब जानते थे कि काला धन वापस लाना इन्दिरा के 'गरीबी हटाओ' नारे के स्वप्न की तरह स्वप्न दिखाने में ही अच्छा है। इसे वास्तविकता में पूरा नहीं करना है।

काले धन का मालिक वह अज्ञात शत्रु आखिर कौन है जिससे पिछली मनमोहन सरकार तो क्या मोदी सरकार भी उलझना नहीं चाहती। जाहिर है सरकारी दफ़्तर का बाबू-चपरासी विदेशों में स्विस बैंक में काला धन नहीं जमा करा सकते। वे तो ज़्यादा से ज़्यादा देश के भीतर मौजूद काले धन के एक बहुत छोटे हिस्से में भागीदारी करते हैं। तब फ़िर वे लोग कौन हैं जो विदेशों में स्विस बैंक में काला धन रखते हैं। इसका जवाब बहुत स्पष्ट है। इनमें सबसे पहले पूंजीपति हैं जो हर साल सरकार को चूना लगाते हैं और अरबों रुपया काले धन के रूप में विदेशों में पहुंचवाते हैं। उनकी इस टैक्स चोरी में इनके सहायक बनने वाले, इनसे कमीशन खाने वाले कुछ नेता और बड़े नौकरशाह इसके बाद आते हैं जो विदेशों में काला धन जमा कराते हैं। काले धन को गोरा करने के लिये और उसे निरन्तर मुनाफ़े के धंधे में लगाये रखने के लिये पूंजीवादी घराने अखबारों-टीवी चैनलों, ट्रस्टों आदि का लम्बा चौड़ा जाल बिछाते हैं। यें घराने अपनी आय कम करके दिखाते हैं और भारी टैक्स चोरी करते हैं। सभी प्रमुख पूंजीवादी घराने व पूंजीवादी मीडिया काले धन के इस धंधे में लिप्त हैं। ये वही सब हैं जिन्होंने खुद भ्रष्टाचार का बढ़-चढ़कर मुद्दा उछाला था और मोदी का जबरदस्त प्रचार किया था।

इसीलिये मोदी अपने आकाओं देश के बड़े पूंजीवादी घरानों के ख़िलाफ़ न तो जा सकते थे और न जायेंगे। काला धन जो, एक अनुमान के मुताबिक 120 लाख करोड़ रुपये के आस-पास है वह जस का तस बना रहेगा। हां! दिखावे के लिये जरूर यह संभव है कि इसका एक बहुत छोटा हिस्सा वापस ला मोदी कुछ वाहवाही जरूर जीत लें।

मोदी के प्रचार से अभिभूत मध्यम वर्ग मानने लगा था कि अगर काला धन देश में आ गया तो इससे सबके दिन फ़िर जायेंगे। पर यह बात भी वास्तविकता से कोसों दूर है। अगर मान भी लिया जाय कि इस काले धन का एक हिस्सा जब्त कर सरकार अपने हाथ में ले ले तो भी वह उसको फ़िर से पूंजीपतियों को ही लुटायेगी और जनता के हाथ में फ़र्जी योजनाओं के कुछ झुनझुने थमा दिये जायेंगे। भारतीय अर्थ व्यवस्था में हर साल बड़े पैमाने पर पैदा हो रहे काले धन पर लगाम कसने में भी मोदी सरकार की कोई दिलचस्पी नहीं है। जाहिर है काले धन पर लगाम लगाने के लिए सरकारी तंत्र मजबूत बना पूंजीपतियों का हर कदम पर गला पकड़ना होगा। पर मौजूदा उदारवादी नीतियां इसकी उलट हैं। वे पूंजीपतियों को हर तरह के सरकारी नियंत्रण से मुक्त बनाती है। खुद मोदी भी जब अपना काम कानून खत्म करना बताते हैं तो वे इन्हीं उदारवादी नीतियों को आगे बढ़ाने की बात करते हैं। यानि मोदी न तो काला धन वापस लाना चाहते हैं और न ही काले धन के पैदा होने पर ही कोई रोकथाम करना चाहते हैं। यही मोदी की सच्चाई है।

भ्रष्टाचार और काले धन का नाश पूंजीवादी दायरे में आज नहीं किया जा सकता। इस पर कुछ रोकथाम के लिए भी जरूरी है कि नवउदारवादी नीतियों को पलट सरकारी नियंत्रण मजबूत किया जाय। पर पूंजीपति वर्ग और उसके सुयोग्य 'नायक' नरेन्द्र मोदी इस सबके लिए तैयार नहीं है। मज़दूर वर्ग पूंजीपतियों के पास जमा समस्त काले-गोरे धन को अपनी लूट से पैदा हुआ मानता है इसीलिए केवल उसके जरिये ही इस समस्त दौलत का निपटारा हो सकता है। मनमोहन-जेटली-मोदी तो काले धन-गोरे धन के मालिकों के प्यादे हैं। मज़दूर वर्ग पूंजीपतियों के साथ उनके प्यादों का भी इंसाफ़ करेगा।

-नागरिक